ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol.-6* Issue-11*December- 2021
Innovation The Research Concept

वर्तमान परिदृश्य में वैदिक धर्म

Vedic Religion In The Present Scenario

Paper Submission: 12/12/2021, Date of Acceptance: 23/12/2021, Date of Publication: 24/12//2021

आराधना वर्मा
एसोसिएट प्रोफेसर,
संस्कृत विभाग,
के0 प्र0 मि0 राजकीय महिला महाविद्यालय,
औराई, भदोही, उत्तर प्रदेश, भारत

Abstract

भारतीय धर्म तथा संस्कृति का मूल तत्व वदों में निहित है ,मनुस्मृति (12/102) के अनुसार-

वेदशास्त्रार्थतत्वज्ञो यत्र कुत्राश्रमे वसन्।
इहैव लोके तिष्ठन् स ब्रह्मभूयाय कल्पते ।

वैदिक शास्त्रों का ज्ञान रखने वाला इस लोक में चारों आश्रमों में रहते हुये कुशलतापूर्वक अपने समस्त कार्यों को सम्पादित करता है और साथ ही ब्रह्म का साक्षात्कार भी करता है। वेदों में उपदिष्ट धर्म किसी एक देश या काल के लिये नही है, अपितु सार्वभौमिक तथा सार्वाकलिक है। यजुर्वेद (40/7) का मंत्र विश्वबंधुत्व की भावना से ओतप्रोत ह,ै जो कि समस्त प्राणियों में अपने को अनुभूत कर आगे बढ़ने की ओर प्रेरित करता है। सम्पूर्ण वैदिक साहित्य मानव - जीवन के विभिन्न क्षेत्रों से सम्बन्धित धर्मोपदेश से अलंकृत है। ऋग्वेद के (अ0 08/49/2-4) के अनुसार परस्पर विरोध रहित होकर सत्य और न्याय के लिये संगठित होकर चलने के लिये कहा गया है। समता एवं समष्टि की भावनाओं पर विशेष बल दिया गया है। यजुर्वेद (अ0 19/77, अ0 1/5, अ0 36/18) के अनुसार सभी प्राणियों के प्रति हृदय में प्रेम, दया, सहानुभूति का भाव होना चाहिये। इस प्रकार के विविध उदाहरणों से वैदिक साहित्य गौरवान्वित है। वर्तमान काल में वेदों में उपदिष्ट धर्म का चिन्तन मनन करते हुये आत्मसात् करने की आवश्यकता अधिक प्रतीत होती ह,ै क्योंकि समाज के प्रत्येक क्षेत्र में अव्यवस्था और भ्रष्टाचार दृष्टिगत हो रहा है। इन सभी समस्याओं से निकलने के लिये आवश्यक है कि वेदों का अध्ययन किया जाय ।

The basic element of Indian religion and culture is contained in the Vedas, according to Manusmriti (12/102)

Vedashastrarthatattvajno yatra kutrashrame vasan.
Ihaiva like tisthans brahma huyay kalpete.

A person who has knowledge of Vedic scriptures, while living in the four ashrams in this world, performs all his tasks efficiently and at the same time realizes Brahman. The religion mentioned in the Vedas is not for any one country or time, but is universal and universal. The mantra of Yajurveda (40/7) is imbued with the spirit of universal brotherhood, which inspires all beings to realize themselves and move forward. The entire Vedic literature is embellished with sermons related to various spheres of human life.According to Rigveda (A. 08/49/2-4) it has been said to walk unitedly for truth and justice without mutual conflict. Special emphasis has been laid on the feelings of equality and community. According to Yajurveda (A. 19/77, A. 1/5, A. 36/18) there should be a feeling of love, kindness, sympathy in the heart towards all beings. Vedic literature is proud of such variety of examples.In the present times, there seems to be a greater need to assimilate the religion mentioned in the Vedas while contemplating, because disorder and corruption are being seen in every sphere of the society. To get out of all these problems it is necessary to study the Vedas

मुख्य शब्दः सम्पादित, साक्षात्कार, गृहस्थ, राजधर्म, आप्यायित, आकाक्षाओं, महत्ता, नैतिकता, यज्ञ।
Keywords: Edited, interviewed, householder, rajdharma, inadequate, aspirations, importance, morality, sacrifice.

प्रस्तावना

भारतीय धर्म तथा संस्कृति के मूल तत्व वेदों में निहित है। मनुस्मृति के अनुसार

''वेदशास्त्रार्थतत्वज्ञो कुत्राश्रमे वसन्।
इहैव लोके तिष्ठन् स ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥ 12/102॥

अर्थात् वैदिकशास्त्रों का ज्ञान रखने वाला इस लोक में चारों आश्रमों में रहते हुये कुशलतापूर्वक अपने समस्त कर्तव्यों को सम्पादित करता है और साथ ही ब्रम्ह का साक्षात्कार करता है।

'यतोडभ्युदय निःश्रेयस् सिद्धिःसः धर्मः (वैशेषिक दर्शन 1/1/2)

अर्थात जिससे इस लोक और परलोक दोनों में उन्नति प्राप्त हो वह धर्म है और वेद ऐसे ही धर्मोपदेश से आप्यायित है। वेदों में उपदिष्ट धर्म किसी एक देश या काल के लिये नहीं है अपितु सार्वभौमिक और सार्वकालिक है।

सम्पूर्ण वैदिक साहित्य मानव जीवन के विभिन्न क्षेत्रों से सम्बन्धित धर्मोपदेश से अलंकृत है। ऋग्वेद के अनुसार1 परस्पर विरोध रहित होकर सत्य और न्याय के लिये संगठित होकर ख्लने के लिये कहा गया है। वेद में स्पष्ट रुप से परमेश्वर से प्रार्थना की गयी है कि हे परमेश्वर ! हमारे हिंसक भावों को

नष्ट करते हुये व्यर्थ में विवाद करने वालों को निम्न श्रेणी की अंधकारयुक्त योनि प्रदान करो।[2] हिंसा शब्द का व्यापक अर्थो में प्रयोग किया गया है। हत्या, वध, किसी प्रकार का कष्ट देना, विध्वंस करना, हानि पहुँचाना, चोट मारना, ईर्ष्या करना, द्वेष करना आदि (संस्कृत हिन्दी कोश, संस्कृत शब्दार्थ कौस्तुभ, वाचस्पत्यम् हिन्दी व्युत्पत्तिकोश, हिन्दी विश्वकोश आदि) । इससे स्पष्ट है कि मन अथवा वाणी अथवा कर्म से किसी का अहित करते हुये कष्ट पहुँचाना हिंसा की श्रेणी में आता है। इस हिंसा का वैदिक साहित्य में सर्वत्र निषेध किया गया है- 'पुरुराव्णो देव रिषस्पाहि' (यजुर्वेद 3/48) अर्थात् हे परमेश्वर! हमें बहुत दुख देने वाले हिंसक शत्रुओं से दूर रखो। साथ ही ऋग्वेद (05/64/30) में अहिंसक व्यक्ति का अनुसरण करने पर बल दिया गया है।

वर्तमान समाज नैतिक पतन की ओर अग्रसर है। वृद्ध माता-पिता को अपनी सन्तानों का सहयोग नहीं प्राप्त हो रहा है। सन्तान माता-पिता के प्रति अपने कर्तव्यों से विमुख है। माता-पिता के साथ संतानों के संदर्भ में यजुर्वेद[3] में वर्णित है कि जैसे" माता-पिता पुत्र का पालन करते है, वैसे पुत्र को माता-पिता की यथोचित सेवा कर पितृऋण से मुक्त होना चाहिए।" इस संदर्भ में वेदों में वर्णित गृहस्थ -आश्रम परम्परा से समुचित मार्गदर्शन प्राप्त किया जा सकता है। यजुर्वेद[4] में तो गृहस्थ आश्रम को सर्वश्रेष्ठ मानते हुये कहा गया है, कि, शेष तीनों आश्रमों (ब्रम्हाचर्य, वानप्रस्थ और सन्यास) में वर्णित उत्तम व्यवहार को संस्कारित सुख और मोक्ष का साधन माना गया है। इसलिये परमैश्वर्य की प्राप्ति के लिये गृहस्थ आश्रम का पालन करना चाहियें। गृहस्थ आश्रम के समुचित पालन पर ही धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष रुप पुरुषार्थ की सिद्वि की जा सकती है। आज जब पारिवारिक विघटन अपने चरम पर है, तो वेदों में वर्णित धर्म का पालन और प्रासंगिक हो गया है। अथर्ववेद में वर्णित है कि " पुत्र पिता के अनुकुल कार्य करें, माता से भी मिलकर रहें। पत्नी भी पति के प्रति सुखदायी और मधुर वचनों का प्रयोग करें । भाई-भाई तथा बहन-बहन भी परस्पर द्वेष से रहित हो, सम्पूर्ण परिवार एक दूसरे के प्रति प्रेमपूर्ण व्यवहार करें।[5] मनुष्य का जीवन पूरी तरह मधुरता से भरा हुआ हो ऐसी प्रार्थना भी दृष्टिगत होती है।[6]

वर्तमान समाज में लोभ के कारण व्यक्ति सत्कर्मो का परित्याग कर निरन्तर दुष्कर्मों में लिप्त होता जा रहा है। धन प्राप्ति की असीमित आंकाक्षाओं ने मनुष्य के विवेक को नष्ट कर दिया है। यही कारण है, कि मनुष्य प्रकृति का निरन्तर दोहन करता जा रहा है। परिणामस्वरुप पर्यावरण असंतुलन कई रुपों में (भूकम्प, बाढ़ सूनामी आदि) के दृष्टिगत हो रहा है, जबकि यजुर्वेद में वर्णित है कि यह सम्पूर्ण प्रकृति ईश्वर से अच्छादित है, लोभ मत करों, धन किसका है अर्थात् किसी का नही है।[7]¬ इस प्रकार अथर्ववेद[8] में भी अनेक स्थलों पर पापयुक्त लक्ष्मी का निषेध कर पुण्य रुपा लक्ष्मी प्राप्ति पर बल दिया गया है। धर्म एवं सत्कर्मो से प्राप्त धन का ही अपने जीवन में उपयोग करना हितकर है, इसी में सम्पूर्ण समाज का कल्याण है।

वेदों में राजधर्म की चर्चा अनेक स्थ्लों पर की गयी है। उत्तम राष्ट्र के लिये किस प्रकार के राजनीतिक धर्म होने चाहिये, इसकी व्याख्या स्पष्ट रुप से की गयी है। राष्ट्र में व्याप्त राजनीतिक समस्याओं का उचित समाधान दृष्टिगत होता है। वर्तमान समय में राष्ट्र में फैली अशान्ति का एक कारण भ्रष्ट राजनीति भी है। यजुर्वेद में वर्णित है कि राजा को न्यायप्रिय, सज्जनों की रक्षा करने वाला एवं दुष्टों का विनाश करने वाला होना चाहिये।[9] राजा और प्रजा को परस्पर हित चाहने वाला होना चाहिये।[10] राजा के साथ ही मंत्रियो[11] सेनापतियों[12], सैनिकों[13] के धर्मो की चर्चा भी विस्तार से की गयी है। राज्य से सम्बन्धित दण्ड व्यवस्था[14], न्याय व्यवस्था[15], युद्वव्यवस्था[16] आदि का वर्णन भी देखने को मिलता है। जिसका आज के राजनीतिक जीवन में महत्वपूर्ण योगदान हो सकता है। आवश्यकता है कि उसका अध्ययन कर समाज के लिये उपयोगी बनाया जाये। आचारः परमोधर्मः (मनुस्मृति 4/108) के साथ ही कर्म की महत्ता पर भी विशेष बल दिया गया है, क्योंकि धर्म का पालन बिना कर्म के सम्भव नहीं है। कर्म करते हुये ही 100 वर्ष जीने की इच्छा करनी चाहिये।[17]

महर्षि दयानन्द सरस्वती के अनुसार "जो पक्षपात रहित, न्याय, आचरण, सत्य भाषण आदि युक्त ईश्वराज्ञा वेदों के अविरुद्व है, वह धर्म है। जिसके द्वारा धर्म को जाना जाये वह वेद है। स्पष्ट है, कि नैतिकता से रहित कोई भी व्यवहार धर्म की श्रेणी में नहीं आता है और शास्त्रों में सर्वत्र ऐसे ही धर्म की स्थापना की गयी है। यजुर्वेद में वर्णित है, कि जब बालक गुरु के पास शिक्षा ग्रहण हेतु जाता है, तो गुरु सर्वप्रथम उसके चरित्र को शुद्व करने का ही संकल्प लेता है-**चरित्रा'स्ते शुन्धामि (6/14)**

अर्थात् मै तुम्हारे सभी चारित्रिक दोषों को दूर करने का संकल्प लेता हूँ। इसके लिये सर्वप्रथम सत्य के अनुपालन पर बल दिया गया है। वैदिक संहिताओं में सत्य के लिये "ऋत" का प्रयोग किया गया है-

सत्यं वा ऋतम् (शतपथ ब्राम्हण 7/3/6) इत्यादि ।

सत्य के पालन के कारण ही मनुष्य पाप कर्मो में संलग्न नहीं हो पाता। यज्ञ आदि कर्मो का अधिकार सत्यवादी को ही प्रदान किया गया है-

"दीक्षितेन सत्यमेव वदितव्यम् (ऐतरेय ब्राम्हण 1/6) ।

अध्ययन को उद्देश्य

वर्तमान समाज दिन -प्रतिदिन नैतिक पतन की ओर अग्रसर दृष्टिगत हो रहा है। मानवीय गुणों का निरन्तर ह्रास होता जा रहा है और दुर्गणों में वृद्वि प्राप्त हो रही है। किसी भी राष्ट्र एवं समाज का विकास मात्र भौतिकता पर आधारित न होकर नैतिकता पर भी आधारित होना चाहिए। इसके लिए आवश्यक है, कि वेदों में निहित धर्मों को निरन्तर आत्मसात् किया जाय,जिससे मनुष्य का जीवन सुख, शान्ति और प्रेम से परिपूर्ण हो सके ।

निष्कर्ष

उपर्युक्त विविध कारणों से वैदिक साहित्य गौरवान्वित है। वर्तमान काल में वेदों में उपदिष्ट धर्म का चिन्तन मनन करते हुये आत्मसात करने की आवश्यकता अधिक प्रतीत होती है, क्योंकि समाज के प्रत्येक क्षेत्र में अव्यवस्था और भ्रष्टाचार दृष्टिगत हो रहा है। इन सभी समस्याओं से निकलने के लिये आवश्यक है, कि वेदों का अध्ययन किया जाये।

सन्दर्भ सूची

1. *सं गच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।*
   देवा भागं यथा पूर्वे संजानानां उपासते (ऋग्वेद 10/111/2-3)
2. *वि न इन्द्र मृधो जहि नीचा यच्छ पृतन्यतः।*
   यो अस्माँ अभिदासत्यधरं गमया तमः॥ (सामवेद प्रथमदशती/2)
3. *यदा पिपेष मातरं पुत्रः प्रमुदितोधयन्।*
   एतच्चदग्रेडअनृणो भवाम्यहतौ पितरौ मया॥
   सम्पृच स्थ सं मा भद्रेण पृङ्क विपृचस्थ नि मा
   पात्मना पृङ्क । (शुक्ल यजुर्वेद 19/11)
4. *यजुर्वेद (8/33)*
5. *अनुव्रतः पितुः पुत्रौ मात्रा भवतु संभना ।*
   जाया पत्ये मधुमतीं वाचं वदतु शान्तिवाम्॥
   मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षन्मा स्वसारमुत स्वसा।
   सम्यञ्चजः सव्रता भूत्वा वाचंवदत भद्रता॥ (अर्थवर्देद 3/30/23)
6. *मधुमन्मे निष्क्रमण ं मधुमन्मे परायणम्।*
   वचा वदामि मधुमद् भूयासं मधुसंदृशः॥ (अथर्ववेद 1/34/3)
   पुमान्पुमान्सं परिपातु विश्वतः (यजुर्वेद 29/51)
7. *मा गृधः कस्य स्विद्धनम् । (यजुर्वेद 40/1)*
8. *या मा लक्ष्मीः पतयालूरजुष्टाभिचस्कन्द वन्दमेववृक्षम्।*
   अन्यत्रास्मत्सवितस्तामितो धा हिरण्यहस्तोवसु नो रराणः॥
   शिवा अस्मभ्यं जातवेदो नि यच्छ।
   रमन्ता पुण्या लक्ष्मीर्याः पापीस्ता अनीनशम्। (अथर्ववेद 7/115/2,3,4)
9. *रक्षसां ग्रीवाडअपि कृन्तामि ..... (यजुर्वेद 6/1)*
10. *त्व प्रजाडउपावरो विश्वास्त्वां प्रजाडउपावरोहन्तु- यजुर्वेद 6/26*
11. *आदित्सन्तं दापयति प्रजानन्त्स ..... यजुर्वेद 9/24,27/8*
12. *यजुर्वेद 18/70,11/26*
13. *वाजिनोवाजजितोडध्वन स्कभ्नुवन्तो योजना मिमानाः काष्ठां गच्छत। यजुर्वेद 9/13*
14. *यजुर्वेद 6/22,11/77*
15. *यजुर्वेद 7/17, 10 / 29*
16. *यजुर्वेद 29/50,17/42*
17. *यजुर्वेद 40/2*